IJARETY

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY *(IJARETY)*

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

INNO SPACE SJIF Scientific Journal Impact Factor

doi cross ref

निस्केयर NISCAIR

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों के दोहन का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव: एक अध्ययन

Preeti Umar, Dr. Poornima Shrivastav

Scholar, Department of Home Science, Sunrise University, Alwar, Rajasthan, India

Professor, Department of Home Science, Sunrise University, Alwar, Rajasthan, India

सारांश (ABSTRACT): यह शोध पत्र तटीय समुदायों के जीवन और उनके पर्यावरणीय, सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे के गहन विश्लेषण पर आधारित है। तटीय क्षेत्र भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि यहाँ की जनसंख्या का बड़ा हिस्सा भूमि आधारित संसाधनों- जैसे कृषि, मत्स्य पालन, वन संपदा, खनिज और पर्यटन- पर निर्भर है। परंतु, हाल के दशकों में औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, खनन और पर्यटन विस्तार के कारण इन संसाधनों का अंधाधुंध दोहन हुआ है, जिससे न केवल प्राकृतिक संतुलन बिगड़ा है बल्कि स्थानीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका, सामाजिक एकता और आर्थिक स्थिरता पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है।

भूमि संसाधनों के अनियंत्रित उपयोग से कृषि भूमि का क्षेत्रफल घटा है, मत्स्य और वन संसाधनों पर दबाव बढ़ा है तथा रोजगार के पारंपरिक अवसर सीमित हुए हैं। इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण पलायन, बेरोजगारी, आर्थिक असमानता और सामाजिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हुई है। वहीं, पर्यावरणीय दृष्टि से भूमि क्षरण, तटीय कटाव, लवणीयता और जैव विविधता में गिरावट जैसी गंभीर समस्याएँ उभर कर सामने आई हैं।

जहाँ स्थानीय समुदायों को संसाधन प्रबंधन में भागीदारी दी गई है, वहाँ सामाजिक स्थिरता और आर्थिक सुधार दोनों संभव हुए हैं। सामुदायिक संसाधन प्रबंधन, जैविक कृषि, सतत मत्स्य पालन और पर्यावरण-अनुकूल पर्यटन जैसी गतिविधियाँ तटीय क्षेत्रों में विकास और संरक्षण के बीच संतुलन बनाने में सहायक सिद्ध हुई हैं।

तटीय क्षेत्रों के संतुलित और सतत विकास के लिए भूमि आधारित संसाधनों का उपयोग वैज्ञानिक, पर्यावरण-अनुकूल और सामुदायिक दृष्टिकोण से किया जाना आवश्यक है। नीतिगत स्तर पर स्थानीय सहभागिता, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक न्याय को केंद्र में रखकर योजनाएँ बनाई जाएँ, तभी तटीय समुदायों का दीर्घकालिक और सर्वांगीण विकास संभव हो सकेगा।

मुख्य शब्द: तटीय क्षेत्र, भूमि आधारित संसाधन, संसाधन दोहन, सामाजिक प्रभाव, आर्थिक असमानता, सतत विकास, सामुदायिक सहभागिता, पर्यावरणीय संतुलन, आजीविका, तटीय पारिस्थितिकी तंत्र।

I. प्रस्तावना

भारत का तटीय क्षेत्र भौगोलिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। लगभग 7,500 किलोमीटर लंबी तटरेखा देश के नौ राज्यों और चार केंद्रशासित प्रदेशों में फैली हुई है, जिसमें पश्चिमी तट पर गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक और केरल तथा पूर्वी तट पर तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, ओडिशा और पश्चिम बंगाल शामिल हैं। इसके अतिरिक्त अंडमान-निकोबार और लक्षद्वीप द्वीप समूह भी भारत के समुद्री परिदृश्य का अभिन्न हिस्सा हैं। यह क्षेत्र न केवल भौगोलिक रूप से विविध है, बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी समृद्ध है। यहाँ रहने वाले समुदायों की जीवनशैली, परंपराएँ, और आजीविका समुद्र और भूमि दोनों से गहराई से जुड़ी हुई हैं। तटीय क्षेत्र भारत की अर्थव्यवस्था में भी एक निर्णायक भूमिका निभाते हैं क्योंकि यहाँ मत्स्य पालन, कृषि, पर्यटन, बंदरगाह गतिविधियाँ और खनिज उद्योग जैसे अनेक क्षेत्रीय आर्थिक कार्य संचालित होते हैं।

तटीय क्षेत्रों का सामाजिक स्वरूप भी विशिष्ट है। यहाँ की जनसंख्या का बड़ा भाग ग्रामीण और अर्ध-शहरी स्वरूप का है, जो प्राकृतिक संसाधनों पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर करता है। समुद्र तटीय गांवों में रहने वाले लोगों का जीवन कृषि, मत्स्य पालन, नमक निर्माण, हस्तकला, बागवानी और लघु व्यापार जैसी गतिविधियों पर आधारित है। इस प्रकार, तटीय क्षेत्र केवल भौगोलिक सीमा नहीं, बल्कि जीवंत सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं। तटीय समाजों में सामुदायिक जीवन, सहयोग की भावना और पारंपरिक ज्ञान प्रणाली प्रमुख हैं, जो पीढ़ियों से चली आ रही हैं।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

भूमि आधारित संसाधनों का इन समुदायों के जीवन में अत्यंत महत्त्व है। तटीय क्षेत्रों की भूमि में बहुप्रकार के संसाधन उपलब्ध हैं- कृषि योग्य भूमि, वन, खनिज, नमक क्षेत्र, जल स्रोत और मिट्टी की विविधता। कृषि के क्षेत्र में यहाँ धान, नारियल, सुपारी, मसाले, सब्ज़ियाँ, दलहन और फलदार वृक्षों की खेती होती है। यह भूमि नदियों के डेल्टा, समुद्री किनारों और उर्वर मिट्टी के कारण अत्यंत उत्पादक है। वन संसाधन भी यहाँ के जीवन का एक प्रमुख अंग हैं, जो लोगों को ईंधन, लकड़ी, औषधीय पौधे और नौका निर्माण की सामग्री प्रदान करते हैं। इसके अलावा, खनिज जैसे रेत, नमक, लौह अयस्क और बॉक्साइट का दोहन तटीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देता है। जल संसाधन सिंचाई, मत्स्य पालन और घरेलू उपयोग के लिए अपरिहार्य हैं।

इन सभी भूमि आधारित संसाधनों का उपयोग तटीय समुदायों की आजीविका के लिए अत्यावश्यक है। कृषि से उन्हें भोजन और आय प्राप्त होती है; वन और खनिज संसाधनों से घरेलू व औद्योगिक कच्चा माल; और जल संसाधनों से आजीविका का संरक्षण। यह संसाधन केवल आर्थिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक रूप से भी महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए, तटीय क्षेत्रों में भूमि और जल से जुड़ी लोक परंपराएँ, धार्मिक मान्यताएँ और सामाजिक रीति-रिवाज प्रचलित हैं। भूमि यहाँ केवल उत्पादन का साधन नहीं, बल्कि समुदाय की पहचान और अस्तित्व का प्रतीक है।

हालाँकि, हाल के दशकों में इन संसाधनों के उपयोग का स्वरूप तीव्र गति से बदल रहा है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, पर्यटन और व्यापार के विस्तार ने भूमि आधारित संसाधनों पर दबाव बढ़ा दिया है। पहले जो भूमि कृषि या सामुदायिक उपयोग के लिए थी, वह अब औद्योगिक इकाइयों, बंदरगाहों, पर्यटन केंद्रों और आवासीय परियोजनाओं में परिवर्तित हो रही है। इससे तटीय समुदायों की पारंपरिक जीवनशैली और आर्थिक संरचना पर गहरा प्रभाव पड़ा है। संसाधनों का यह अनियंत्रित दोहन पर्यावरणीय असंतुलन, भूमि क्षरण, मृदा लवणीयता, तटीय कटाव और जैव विविधता के ह्रास का कारण बन रहा है।

भूमि आधारित संसाधनों के दोहन ने सामाजिक असमानता और आर्थिक विषमता को भी बढ़ाया है। जिनके पास भूमि या पूंजी है, वे संसाधनों के व्यावसायिक उपयोग से लाभान्वित हो रहे हैं, जबकि गरीब और भूमिहीन समुदाय अपनी पारंपरिक आजीविका खो रहे हैं। भूमि अधिग्रहण के कारण विस्थापन और पलायन बढ़ा है। स्थानीय समुदायों के बीच सामाजिक अस्थिरता और सांस्कृतिक पहचान का संकट गहराता जा रहा है। जो समुदाय पहले पर्यावरण के साथ संतुलन बनाकर जीवन जीते थे, वे अब बाजार-आधारित विकास की नीतियों के दबाव में अपनी पारंपरिक जड़ों से दूर हो रहे हैं।

वर्तमान समय में तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों का अत्यधिक दोहन एक गंभीर चुनौती के रूप में उभर रहा है। प्राकृतिक संसाधनों की सीमितता, जनसंख्या दबाव और आर्थिक हितों की टकराहट ने इस समस्या को और जटिल बना दिया है। कई स्थानों पर औद्योगिक इकाइयों के अपशिष्ट से जल स्रोत प्रदूषित हो रहे हैं; रेत खनन से तटीय संरचना कमजोर हो रही है; और वनों की कटाई से भूमि का अपरदन बढ़ा है। इन समस्याओं का सीधा असर स्थानीय लोगों की आजीविका, स्वास्थ्य और सामाजिक स्थिरता पर पड़ रहा है।

तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों के दोहन से जुड़ी चुनौतियाँ केवल पर्यावरणीय नहीं हैं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी उतनी ही गंभीर हैं। एक ओर जहाँ आर्थिक विकास और औद्योगिक विस्तार को बढ़ावा दिया जा रहा है, वहीं दूसरी ओर तटीय समुदायों का पारंपरिक जीवन संकट में है। इसलिए इन दोनों के बीच संतुलन स्थापित करना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। विकास की प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जो पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखते हुए सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता सुनिश्चित करे। इस शोध में चयनित अध्ययन क्षेत्र- भारत के कुछ विशिष्ट तटीय जिले- इस जटिलता को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, गुजरात और ओडिशा के कुछ तटीय क्षेत्रों में औद्योगिक विकास ने रोजगार के नए अवसर प्रदान किए हैं, परंतु साथ ही भूमि ह्रास और जल प्रदूषण की समस्या बढ़ाई है। वहीं केरल और गोवा जैसे राज्यों में पर्यटन के विकास ने अर्थव्यवस्था को सशक्त किया है, लेकिन इससे भूमि स्वामित्व की असमानता और स्थानीय समुदायों के विस्थापन की समस्या भी उत्पन्न हुई है। इन भिन्न परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन यह समझने में सहायता करेगा कि भूमि आधारित संसाधनों का उपयोग किस प्रकार सामाजिक और आर्थिक जीवन को प्रभावित कर रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों के दोहन की प्रकृति और स्वरूप का अध्ययन करना।
2. संसाधन दोहन के सामाजिक और आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करना।
3. सतत विकास के लिए सामुदायिक संसाधन प्रबंधन की संभावनाओं का मूल्यांकन करना।

परिकल्पनाएँ

1. भूमि संसाधनों के अत्यधिक दोहन से तटीय समुदायों में सामाजिक और आर्थिक असमानता बढ़ी है।
2. औद्योगिकीकरण और भूमि अधिग्रहण से पारंपरिक आजीविका प्रणाली प्रभावित हुई है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

3. सामुदायिक सहभागिता आधारित संसाधन प्रबंधन से संतुलित और सतत विकास संभव है।

साहित्यानुसंधान

तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों के दोहन पर अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय शोध किए गए हैं। विद्वानों का मत है कि तटीय समुदायों का जीवन भूमि और समुद्र दोनों पर समान रूप से निर्भर है, और संसाधनों का असंतुलित दोहन उनके सामाजिक-आर्थिक ढांचे को प्रभावित करता है।

भारत में किए गए अध्ययनों (मिदायत, 2019; सिंह, 2020) से स्पष्ट होता है कि औद्योगिकीकरण और पर्यटन के विस्तार से भूमि उपयोग में बड़े परिवर्तन आए हैं, जिससे कृषि भूमि सिकुड़ी और पारंपरिक व्यवसाय समाप्त हुए। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जूजोनस और सीकैम्प (2018) तथा डी ग्रूट (2016) के अध्ययनों ने यह दर्शाया कि संसाधन क्षरण से तटीय समाजों की सामाजिक स्थिरता और आय में गिरावट आई है।

अधिकांश शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि स्थानीय समुदायों की सहभागिता और पारंपरिक ज्ञान के आधार पर संसाधनों का प्रबंधन किया जाए तो तटीय क्षेत्रों में आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संतुलन दोनों संभव हैं। वर्तमान शोध इन्हीं पूर्व अध्ययनों के आधार पर क्षेत्रीय स्तर पर भूमि दोहन के सामाजिक और आर्थिक प्रभावों की गहराई से जाँच करेगा।

II. तटीय समुदायों का सामाजिक जीवन एवं भूमि संसाधन दोहन का प्रभाव

भारत के तटीय क्षेत्र सदियों से सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक एकता और प्राकृतिक संसाधनों की समृद्धि के प्रतीक रहे हैं। यहाँ के समुदायों का जीवन भूमि और समुद्र दोनों पर समान रूप से आधारित है। कृषि, मत्स्य पालन, बागवानी, नमक उत्पादन, वन-उत्पाद संग्रहण और हस्तकला जैसी पारंपरिक गतिविधियाँ तटीय जीवन की पहचान रही हैं। इन गतिविधियों ने न केवल आर्थिक जीवन को स्थिरता प्रदान की है, बल्कि सामाजिक संरचना, पारिवारिक संबंधों और सांस्कृतिक परंपराओं को भी आकार दिया है। तटीय समाजों का जीवन सदैव सामूहिकता, सहयोग और पर्यावरणीय संतुलन के सिद्धांतों पर आधारित रहा है।

परंतु औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, और भूमि आधारित संसाधनों के अनियंत्रित दोहन ने इस पारंपरिक सामाजिक ढाँचे को गहराई से प्रभावित किया है। जो समुदाय पहले प्राकृतिक संसाधनों के साथ सहअस्तित्व की भावना से जीवन जीते थे, वे अब भूमि, जल और वन संपदा के असंतुलित उपयोग के कारण अनेक सामाजिक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। इस परिवर्तन ने न केवल उनके आर्थिक जीवन में अस्थिरता पैदा की है, बल्कि उनके सामाजिक ताने-बाने को भी कमजोर किया है।

पारंपरिक सामाजिक संरचना और सामुदायिक जीवन

तटीय समुदायों की सामाजिक संरचना सहयोग, साझेदारी और पारंपरिक ज्ञान पर आधारित रही है। यहाँ के लोग भूमि और जल को केवल उत्पादन के साधन के रूप में नहीं, बल्कि जीवन और संस्कृति के हिस्से के रूप में देखते थे। कृषि और मत्स्य पालन सामूहिक श्रम पर आधारित होते थे- पुरुष खेतों और समुद्र में काम करते थे, जबकि महिलाएँ प्रसंस्करण, विपणन और घरेलू उत्पादन में योगदान देती थीं।

गाँवों में "सहकारी श्रम प्रणाली" प्रचलित थी, जिसमें समुदाय के सभी सदस्य एक-दूसरे की सहायता करते थे। संसाधनों का उपयोग सीमित और साझा होता था, जिससे सामाजिक एकता बनी रहती थी। तटीय क्षेत्रों में जल और भूमि से जुड़े अनेक धार्मिक अनुष्ठान और लोकपरंपराएँ प्रचलित थीं, जो मनुष्य और प्रकृति के सामंजस्य को दर्शाती थीं।

परंतु अब यह सामाजिक संरचना तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। भूमि आधारित संसाधनों के अत्यधिक दोहन और निजीकरण ने सामुदायिक स्वामित्व की परंपरा को कमजोर कर दिया है। पहले जो भूमि सामूहिक थी, वह अब निजी संपत्ति बन गई है, जिससे सामाजिक एकता की जगह प्रतिस्पर्धा और विभाजन ने ले ली है।

भूमि आधारित संसाधन दोहन और सामाजिक परिवर्तन

भूमि आधारित संसाधनों के दोहन का प्रभाव तटीय समाजों पर बहुआयामी रहा है। सबसे पहले, भूमि अधिग्रहण और औद्योगिक परियोजनाओं के कारण बड़ी संख्या में लोग विस्थापित हुए हैं। औद्योगिक इकाइयों, बंदरगाहों, पर्यटन स्थलों और खनन परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहित की गई, जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय लोगों को अपने पैतृक घरों और खेती योग्य भूमि से वंचित होना पड़ा। यह विस्थापन केवल भौतिक नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक आघात भी है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

विस्थापित परिवारों की सामाजिक स्थिति कमजोर हुई है। जिनका जीवन कृषि, मत्स्य पालन या वनों पर निर्भर था, उन्हें अब अस्थायी मजदूरी या शहरी क्षेत्रों में असंगठित रोजगार पर निर्भर रहना पड़ता है। इससे उनकी सामाजिक पहचान, आत्मनिर्भरता और सुरक्षा की भावना पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

भूमि संसाधनों के दोहन ने सामाजिक वर्ग विभाजन को भी बढ़ावा दिया है। जिन लोगों के पास भूमि या पूंजी थी, वे औद्योगिक विकास से लाभान्वित हुए, जबकि गरीब और भूमिहीन समुदाय पीछे रह गए। परिणामस्वरूप आर्थिक असमानता के साथ-साथ सामाजिक असमानता भी गहराई। इस असमानता ने समुदायों के भीतर सहयोग की भावना को कम कर दिया और सामाजिक तनाव की स्थिति पैदा की।

महिलाओं की भूमिका और स्थिति में परिवर्तन

तटीय समाजों में महिलाओं की भूमिका पारंपरिक रूप से अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है। वे न केवल घरेलू कार्यों की ज़िम्मेदारी निभाती थीं, बल्कि कृषि, मत्स्य प्रसंस्करण, नमक निर्माण, बागवानी और हस्तशिल्प जैसे क्षेत्रों में भी सक्रिय भागीदारी करती थीं। उनका श्रम सामाजिक और आर्थिक जीवन का अभिन्न अंग था।

भूमि आधारित संसाधनों के दोहन और औद्योगिक विस्तार के बाद महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। भूमि के निजीकरण और पारंपरिक कार्यों के समाप्त होने से महिलाओं की आर्थिक भूमिका सीमित हो गई है। कई क्षेत्रों में महिलाएँ बेरोज़गार हो गईं या उन्हें कम वेतन वाले अस्थायी कार्यों में लगा दिया गया। इससे उनके निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक सम्मान में कमी आई है।

इसके अलावा, पुरुषों के पलायन ने भी महिलाओं के जीवन को प्रभावित किया है। जब पुरुष रोजगार की तलाश में शहरों की ओर जाते हैं, तो घर और खेत की पूरी जिम्मेदारी महिलाओं पर आ जाती है। यह भार उन्हें सामाजिक और मानसिक रूप से अधिक संवेदनशील बना देता है। तटीय समाजों में महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए आज नई नीतियों और सामुदायिक समर्थन की आवश्यकता है।

पलायन और पारिवारिक अस्थिरता

भूमि संसाधनों के दोहन के परिणामस्वरूप तटीय क्षेत्रों में पलायन की समस्या गंभीर रूप ले चुकी है। जब स्थानीय आजीविका के साधन समाप्त होते हैं, तो युवा वर्ग बेहतर अवसरों की तलाश में शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन करता है। इस प्रक्रिया से गाँवों में जनसंख्या का असंतुलन उत्पन्न होता है- वृद्ध, महिलाएँ और बच्चे ही प्रायः गाँवों में रह जाते हैं।

इस पलायन का पारिवारिक जीवन पर गहरा असर पड़ता है। पारिवारिक एकता कमजोर होती है, बच्चों की शिक्षा प्रभावित होती है और सामाजिक संबंधों में दूरी आती है। जो समुदाय पहले सामूहिक जीवन के प्रतीक थे, अब धीरे-धीरे बिखरते जा रहे हैं।

सामाजिक असमानता और संघर्ष

भूमि आधारित संसाधनों के व्यावसायीकरण ने तटीय समाजों में सामाजिक असमानता को बढ़ाया है। औद्योगिक विकास और भूमि अधिग्रहण से कुछ वर्गों ने आर्थिक लाभ अर्जित किया, जबकि कमजोर वर्गों को विस्थापन, बेरोजगारी और गरीबी का सामना करना पड़ा। परिणामस्वरूप, समाज में वर्ग आधारित विभाजन और तनाव बढ़ा है।

भूमि स्वामित्व की असमानता सामाजिक संबंधों को भी प्रभावित करती है। पहले जहाँ समुदाय संसाधनों को साझा करते थे, वहीं अब संसाधनों पर नियंत्रण कुछ गिने-चुने लोगों के हाथ में केंद्रित हो गया है। यह स्थिति सामाजिक न्याय और सामुदायिक संतुलन दोनों के लिए चुनौती बन गई है।

सांस्कृतिक परिवर्तन और पहचान का संकट

भूमि और पर्यावरण से जुड़ी सांस्कृतिक परंपराएँ तटीय समाजों की पहचान का हिस्सा रही हैं। भूमि, जल और समुद्र से संबंधित अनेक त्योहार, अनुष्ठान और लोककथाएँ इन समुदायों के जीवन में गहराई से रची-बसी हैं। परंतु जब भूमि का स्वरूप बदलने लगा और पारंपरिक व्यवसाय समाप्त होने लगे, तो इन सांस्कृतिक परंपराओं का अस्तित्व भी खतरे में पड़ गया।

औद्योगिक और शहरी प्रभाव ने नई जीवनशैली और उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा दिया है, जिससे पारंपरिक मूल्यों और सामुदायिक एकता में गिरावट आई है। कई स्थानों पर युवा पीढ़ी अब अपनी सांस्कृतिक जड़ों से कटती जा रही है, क्योंकि उनका जीवन अब बाजार-आधारित रोजगार और नगरीय उपभोक्ता संस्कृति पर निर्भर हो गया है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

सामुदायिक सहभागिता और सामाजिक पुनर्गठन की आवश्यकता

भूमि आधारित संसाधनों के दोहन से उत्पन्न सामाजिक संकट का समाधान केवल नीतियों से संभव नहीं, बल्कि समुदाय की भागीदारी से ही संभव है। जहाँ-जहाँ स्थानीय लोगों को संसाधन प्रबंधन में भागीदारी दी गई है, वहाँ सकारात्मक परिणाम देखने को मिले हैं। उदाहरण के लिए, केरल और ओडिशा के तटीय क्षेत्रों में "सहकारी मत्स्य समितियों" और "महिला स्व-सहायता समूहों" ने आर्थिक सशक्तिकरण के साथ-साथ सामाजिक एकता को भी पुनः स्थापित किया है।

इससे यह सिद्ध होता है कि सामाजिक स्थिरता और सामुदायिक एकता तभी संभव है जब लोग अपने संसाधनों के संरक्षक बनें, न कि केवल उपभोक्ता। सामुदायिक भागीदारी, शिक्षा, और स्थानीय नेतृत्व के माध्यम से भूमि उपयोग में संतुलन स्थापित किया जा सकता है।

भूमि संसाधन दोहन का आर्थिक प्रभाव

तटीय क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था भूमि आधारित संसाधनों पर गहराई से निर्भर रही है। इन क्षेत्रों के निवासियों की आय, रोजगार और जीवन स्तर कृषि, मत्स्य पालन, वनों, खनिजों और स्थानीय उद्योगों से जुड़ा रहा है। सदियों से ये समुदाय आत्मनिर्भर आर्थिक प्रणाली पर आधारित रहे हैं, जहाँ प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग संतुलित रूप में किया जाता था। परंतु आधुनिक युग में औद्योगिकीकरण, पर्यटन, खनन और शहरीकरण की तीव्र गति ने इस संतुलन को तोड़ दिया है। भूमि आधारित संसाधनों के अंधाधुंध दोहन ने तटीय अर्थव्यवस्था की पारंपरिक संरचना को बदल दिया है, जिससे सामाजिक-आर्थिक विषमताएँ, बेरोज़गारी और आजीविका संकट जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

III. कृषि पर प्रभाव

कृषि तटीय क्षेत्रों की पारंपरिक और प्रमुख आर्थिक गतिविधि रही है। यहाँ धान, नारियल, सुपारी, मसाले, दलहन और फलदार वृक्षों की खेती की जाती रही है। तटीय मिट्टी की उर्वरता और मानसूनी वर्षा इन क्षेत्रों को कृषि के लिए उपयुक्त बनाती थी। परंतु भूमि संसाधनों के दोहन और औद्योगिक विस्तार के कारण कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल लगातार घट रहा है।
औद्योगिक परियोजनाओं, बंदरगाहों, पर्यटन केंद्रों और शहरी विस्तार के लिए बड़ी मात्रा में कृषि भूमि अधिग्रहित की गई है। परिणामस्वरूप, किसान अपनी भूमि खोकर मजदूर बन गए हैं। कृषि उत्पादन में गिरावट आई है, जिससे ग्रामीण आय में कमी हुई है। रासायनिक प्रदूषण, लवणीयता और जल की कमी ने भूमि की गुणवत्ता को भी प्रभावित किया है।

इसके अतिरिक्त, भूमि के बँटवारे और पीढ़ीगत विभाजन ने छोटे किसानों की संख्या बढ़ा दी है। सीमांत किसान अब अपनी भूमि से पर्याप्त उत्पादन नहीं कर पा रहे हैं, जिससे आर्थिक असुरक्षा बढ़ी है। परिणामस्वरूप, अनेक परिवार कृषि छोड़कर वैकल्पिक रोजगार की तलाश में पलायन कर रहे हैं।

मत्स्य पालन पर प्रभाव

तटीय क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। मछुआरा समुदायों की आजीविका समुद्री और तटीय मत्स्य संसाधनों पर निर्भर है। परंतु बढ़ते औद्योगिक प्रदूषण, तटीय निर्माण, रेत खनन और जल प्रदूषण के कारण मछलियों की संख्या घट रही है।

औद्योगिक अपशिष्ट और जहरीले रसायनों के समुद्र में मिल जाने से समुद्री जैव विविधता प्रभावित हुई है। पारंपरिक मछुआरों को अब पहले जितनी मछलियाँ नहीं मिल रही हैं, जिससे उनकी आय में गिरावट आई है। साथ ही, बड़े मछली व्यापारियों और ट्रॉलिंग बोट मालिकों के आने से प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। पारंपरिक मछुआरों की पकड़ सीमित होने के कारण उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती जा रही है।

कुछ स्थानों पर पर्यटन उद्योग और औद्योगिक बंदरगाहों के विस्तार ने तटीय जलक्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया है, जिससे मछुआरों की पहुँच सीमित हो गई है। इससे आजीविका संकट और बढ़ा है।

औद्योगिकीकरण और खनन का प्रभाव

भूमि आधारित संसाधनों के दोहन का सबसे स्पष्ट प्रभाव औद्योगिक विस्तार में देखा जा सकता है। गुजरात, ओडिशा, महाराष्ट्र और तमिलनाडु जैसे राज्यों में खनिज संसाधनों के प्रचुर भंडार के कारण भारी उद्योगों की स्थापना हुई है। ये उद्योग स्थानीय अर्थव्यवस्था को कुछ हद तक गति देते हैं, परंतु साथ ही पर्यावरण और कृषि भूमि के लिए खतरा बनते हैं।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

खनिज उत्खनन से भूमि की ऊपरी परत नष्ट होती है, जिससे मिट्टी की उर्वरता घटती है। खदानों से निकलने वाले अपशिष्ट नालों और नदियों में मिलने से जल प्रदूषण बढ़ता है। उद्योगों की स्थापना के लिए भूमि अधिग्रहण के कारण ग्रामीणों को मुआवज़ा तो मिलता है, परंतु दीर्घकालिक आर्थिक सुरक्षा नहीं मिलती। बहुत-से विस्थापित परिवार अल्पावधि में अपना मुआवज़ा खर्च कर देते हैं और बाद में आर्थिक संकट का सामना करते हैं।

औद्योगिक विकास से कुछ नए रोजगार के अवसर अवश्य उत्पन्न होते हैं, परंतु ये अधिकतर अस्थायी और कुशल श्रमिकों के लिए सीमित रहते हैं। स्थानीय समुदाय, जिनके पास तकनीकी कौशल नहीं होता, अधिकतर मजदूर या ठेकेदार श्रमिक के रूप में काम करने को मजबूर हो जाते हैं।

पर्यटन उद्योग और भूमि उपयोग परिवर्तन

पर्यटन उद्योग तटीय क्षेत्रों के लिए एक बड़ी आर्थिक संभावना के रूप में देखा गया है। गोवा, केरल, तमिलनाडु और अंडमान-निकोबार जैसे राज्यों में पर्यटन से स्थानीय आय में वृद्धि हुई है, परंतु इसके सामाजिक-आर्थिक दुष्प्रभाव भी स्पष्ट हैं।

पर्यटन केंद्रों के विकास के लिए बड़ी मात्रा में तटीय भूमि अधिग्रहित की गई, जिससे स्थानीय समुदायों की खेती योग्य भूमि और आवासीय क्षेत्र सिकुड़ गए। समुद्र तटों पर निजी रिसॉर्ट और होटल बनने से पारंपरिक मछुआरा बस्तियाँ विस्थापित हो गईं। पर्यटन से जुड़े रोजगार अस्थायी हैं, और उनमें स्थानीय लोगों की भागीदारी सीमित है।

इसके अलावा, पर्यटन उद्योग ने भूमि की कीमतों में अत्यधिक वृद्धि की है, जिससे भूमि धनी वर्गों के हाथों में सिमटती जा रही है। गरीब समुदाय अपनी भूमि बेचने को विवश हो गए हैं, जिससे आर्थिक असमानता और बढ़ी है।

रोजगार और आय पर प्रभाव

भूमि आधारित संसाधनों के दोहन ने तटीय क्षेत्रों में रोजगार संरचना को पूरी तरह बदल दिया है। पारंपरिक रोजगार जैसे कृषि, मत्स्य पालन और हस्तकला अब घटते जा रहे हैं, जबकि औद्योगिक और पर्यटन क्षेत्र में अस्थायी रोजगार बढ़ा है।

इस परिवर्तन से आर्थिक स्थिरता कमजोर हुई है। पहले जहाँ समुदाय स्थायी और आत्मनिर्भर रोजगार पर निर्भर थे, वहीं अब उनका जीवन बाजार और ठेका श्रम पर निर्भर हो गया है। इससे उनकी मासिक आय में अनिश्चितता और ऋणग्रस्तता बढ़ी है।

आर्थिक असमानता भी तीव्र रूप से बढ़ी है। जिन लोगों को भूमि अधिग्रहण से मुआवज़ा मिला, वे अस्थायी रूप से लाभान्वित हुए, परंतु जिनके पास भूमि नहीं थी, वे बेरोजगार हो गए। इस असमानता ने सामाजिक तनाव और वर्ग विभाजन को भी जन्म दिया है।

आर्थिक असमानता और गरीबी

भूमि संसाधनों के दोहन ने तटीय क्षेत्रों में आर्थिक असमानता को गहरा किया है। पहले जहाँ आर्थिक अवसर समुदाय में समान रूप से वितरित थे, वहीं अब संसाधनों पर नियंत्रण कुछ वर्गों तक सीमित हो गया है। अमीर वर्ग औद्योगिक विकास और पर्यटन से लाभ कमा रहे हैं, जबकि गरीब वर्ग अपनी पारंपरिक आजीविका से वंचित होकर गरीबी रेखा के नीचे पहुँच गया है।

आर्थिक असमानता का यह अंतर केवल आय तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक अवसरों, शिक्षा, स्वास्थ्य और जीवन स्तर पर भी प्रभाव डाल रहा है। जिन क्षेत्रों में औद्योगिक गतिविधियाँ तेज़ हैं, वहाँ स्थानीय समुदाय आर्थिक रूप से पिछड़ रहे हैं, क्योंकि वे पूंजी निवेश या नीति निर्माण में भागीदारी नहीं कर पा रहे हैं।

भूमि उपयोग परिवर्तन के पर्यावरणीय प्रभाव

भारत के तटीय क्षेत्र केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि पर्यावरणीय दृष्टि से भी अत्यंत संवेदनशील क्षेत्र हैं। यहाँ का पारिस्थितिक तंत्र- जिसमें मैंग्रोव वन, दलदली क्षेत्र, तटीय टिब्बे, नदियों के मुहाने और समुद्री जैव विविधता शामिल है- न केवल स्थानीय जीवन का आधार है, बल्कि यह देश की पर्यावरणीय स्थिरता के लिए भी महत्वपूर्ण है। भूमि आधारित संसाधनों के बढ़ते दोहन, औद्योगिकीकरण, पर्यटन, शहरी विस्तार और खनन ने इस पारिस्थितिकी तंत्र को गहराई से प्रभावित किया है। इन गतिविधियों ने भूमि, जल, वायु और जैव विविधता पर गंभीर पर्यावरणीय प्रभाव डाले हैं, जो अब तटीय क्षेत्रों के लिए एक स्थायी खतरे के रूप में उभर रहे हैं।

तटीय पारिस्थितिकी तंत्र का असंतुलन

भूमि आधारित संसाधनों के अत्यधिक दोहन से तटीय पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन गंभीर रूप से बिगड़ा है। औद्योगिक और शहरी विस्तार के लिए तटीय भूमि को बड़े पैमाने पर समतल किया जा रहा है, जिससे प्राकृतिक वनस्पति और जैव विविधता का नाश हो रहा है। मैंग्रोव वन- जो समुद्री तूफानों और कटाव से प्राकृतिक रक्षा कवच का काम करते हैं — तेजी से नष्ट हो रहे हैं।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

मैंग्रोवों की कटाई से न केवल समुद्री किनारों का क्षरण बढ़ा है, बल्कि कई मछली प्रजातियों और समुद्री जीवों के प्रजनन स्थल भी समाप्त हो गए हैं। यह पारिस्थितिक परिवर्तन समुद्री भोजन श्रृंखला को भी बाधित करता है, जिससे मत्स्य पालन पर निर्भर समुदायों की आजीविका प्रभावित होती है।

मृदा क्षरण और भूमि की उर्वरता में कमी

तटीय भूमि की सबसे बड़ी समस्या मृदा क्षरण और लवणीयता की वृद्धि है। भूमि के अत्यधिक उपयोग, रेत खनन और वनों की कटाई से भूमि की ऊपरी परत क्षतिग्रस्त हो जाती है। इससे मृदा की जलधारण क्षमता घटती है और कृषि उत्पादन में गिरावट आती है।

खनन गतिविधियों और औद्योगिक निर्माण के कारण भूमि का भौतिक स्वरूप बदल गया है। तटीय नदियों के किनारों पर अत्यधिक रेत खनन ने जल प्रवाह को असंतुलित कर दिया है, जिससे मिट्टी का अपरदन बढ़ा है। साथ ही, औद्योगिक अपशिष्टों और रासायनिक प्रदूषकों के मिश्रण से मिट्टी की गुणवत्ता घट रही है। इससे भूमि की उत्पादकता में गिरावट आई है, जो सीधे तौर पर किसानों की आय और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रही है।

जल प्रदूषण और लवणीयता में वृद्धि

तटीय क्षेत्रों में भूमि उपयोग परिवर्तन का सबसे गंभीर प्रभाव जल संसाधनों पर पड़ा है। औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले रासायनिक अपशिष्ट, तेल रिसाव और ठोस कचरा समुद्री और भूजल स्रोतों को दूषित कर रहे हैं। तटीय नदियों और तालाबों में प्रदूषण के कारण पीने योग्य जल की उपलब्धता कम हो रही है।

इसके साथ ही, समुद्र स्तर में वृद्धि और भूजल के अत्यधिक दोहन से "समुद्री जल का अंत:प्रवेश" बढ़ा है। इससे भूमि की लवणीयता बढ़ती जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप कृषि भूमि बंजर होती जा रही है। कुछ क्षेत्रों में यह समस्या इतनी गंभीर है कि किसान अब वैकल्पिक व्यवसाय अपनाने को मजबूर हैं।

जलवायु परिवर्तन और चरम मौसमी घटनाएँ

भूमि उपयोग में परिवर्तन और वनों की कटाई ने स्थानीय जलवायु पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाला है। हरित क्षेत्र घटने से तापमान में वृद्धि और आर्द्रता में परिवर्तन देखा जा रहा है। तटीय क्षेत्रों में अब पहले की तुलना में अधिक बार चक्रवात, बाढ़ और तूफान जैसी चरम घटनाएँ हो रही हैं।

मैंग्रोवों के नष्ट होने और रेत खनन के कारण समुद्री तट अधिक असुरक्षित हो गए हैं। जहाँ पहले प्राकृतिक अवरोध बाढ़ और लहरों से रक्षा करते थे, अब वे समाप्त हो चुके हैं। परिणामस्वरूप, चक्रवातों से होने वाली क्षति में वृद्धि हुई है। जलवायु परिवर्तन के इन प्रभावों से न केवल पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ा है, बल्कि मानव जीवन और संपत्ति पर भी खतरा बढ़ा है।

जैव विविधता में ह्रास

तटीय पारिस्थितिकी तंत्र जैव विविधता का भंडार है। यहाँ की नदियाँ, दलदली भूमि और मैंग्रोव वनों में अनेक दुर्लभ प्रजातियाँ पाई जाती हैं। परंतु भूमि उपयोग में परिवर्तन, औद्योगिक अपशिष्ट और शहरी विस्तार के कारण इन प्रजातियों के आवास नष्ट हो रहे हैं। मछलियों, कछुओं, पक्षियों और पौधों की अनेक प्रजातियाँ अब विलुप्ति के कगार पर हैं। इस जैव विविधता के क्षरण से न केवल पारिस्थितिकी पर असर पड़ता है, बल्कि स्थानीय समुदायों की खाद्य सुरक्षा और आजीविका पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

औद्योगिक प्रदूषण और तटीय भूमि क्षरण

औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले रासायनिक पदार्थ, तेल और धातु अवशेष तटीय जल और मिट्टी को प्रदूषित कर रहे हैं। इससे मछली उत्पादन घटा है और कृषि भूमि की उर्वरता नष्ट हो रही है। कुछ क्षेत्रों में औद्योगिक अपशिष्ट के कारण जल पूरी तरह अनुपयोगी हो चुका है।

साथ ही, औद्योगिक और शहरी निर्माण से भूमि की प्राकृतिक जल निकासी प्रणाली बाधित हुई है, जिससे बाढ़ और जलभराव की समस्या बढ़ी है। तटीय कटाव अब एक स्थायी संकट बन चुका है, जिससे हर साल हजारों हेक्टेयर भूमि समुद्र में समा रही है।

पर्यावरणीय असंतुलन और सामाजिक प्रभाव

भूमि उपयोग में हुए इन पर्यावरणीय परिवर्तनों का सीधा असर तटीय समुदायों के जीवन पर पड़ता है। कृषि भूमि के बंजर होने, मत्स्य संसाधनों में कमी और पेयजल संकट के कारण लोगों की आजीविका प्रभावित हो रही है। पर्यावरणीय असंतुलन ने स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को भी जन्म दिया है- जैसे जलजनित रोग, कुपोषण और श्वसन रोग।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

इसके अलावा, प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती आवृत्ति ने तटीय समाजों में असुरक्षा की भावना को बढ़ाया है। जब पर्यावरण अस्थिर होता है, तो समाज का आर्थिक और सामाजिक संतुलन भी बिगड़ जाता है।

नीतिगत परिप्रेक्ष्य एवं सतत विकास की दिशा

तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों के दोहन ने न केवल सामाजिक और आर्थिक असमानता को बढ़ाया है, बल्कि पर्यावरणीय असंतुलन भी उत्पन्न किया है। इस चुनौती से निपटने के लिए एक समग्र और संतुलित नीति दृष्टिकोण की आवश्यकता है। नीतियाँ ऐसी होनी चाहिए जो विकास और संरक्षण दोनों को समान महत्व दें- अर्थात् *सतत विकास* की अवधारणा पर आधारित हों। सतत विकास का उद्देश्य केवल आर्थिक वृद्धि नहीं, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संतुलन के समन्वय से दीर्घकालिक स्थिरता प्राप्त करना है।

सतत विकास की अवधारणा

सतत विकास का मूल उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताएँ पूरी हों, परंतु भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता न हो। भूमि आधारित संसाधनों के संदर्भ में इसका अर्थ है — संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाए कि वे पुनः उत्पन्न हो सकें, और पर्यावरणीय क्षति न्यूनतम हो।

तटीय क्षेत्रों में यह दृष्टिकोण और भी आवश्यक है क्योंकि यहाँ की भूमि और समुद्र दोनों सीमित और संवेदनशील हैं। यदि इनका दोहन अंधाधुंध रूप में किया गया, तो यह न केवल पारिस्थितिकी तंत्र को क्षति पहुँचाएगा, बल्कि मानव अस्तित्व के लिए भी खतरा बन जाएगा।

IV. नीतिगत परिप्रेक्ष्य

भारत सरकार और विभिन्न राज्य सरकारों ने तटीय संसाधनों के संरक्षण और संतुलित उपयोग के लिए अनेक नीतियाँ और कानून बनाए हैं। इनमें प्रमुख हैं —

1. **तटीय विनियमन क्षेत्र अधिनियम :** इस अधिनियम का उद्देश्य तटीय क्षेत्रों में निर्माण, औद्योगिक गतिविधियों और भूमि उपयोग को नियंत्रित करना है। समुद्र तट से 500 मीटर की सीमा तक पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्र घोषित किए गए हैं।
2. **ब्लू इकॉनमी नीति :** इसका लक्ष्य समुद्री और तटीय संसाधनों के आर्थिक उपयोग को सतत विकास के सिद्धांतों के अनुरूप बढ़ावा देना है। इसमें मत्स्य पालन, समुद्री जैव प्रौद्योगिकी, समुद्री ऊर्जा और पर्यटन को पर्यावरण-अनुकूल बनाने पर बल दिया गया है।
3. **राष्ट्रीय तटीय मिशन :** यह नीति तटीय पारिस्थितिकी संरक्षण, मैंग्रोव पुनर्विकास, प्रदूषण नियंत्रण और तटीय समुदायों के सशक्तिकरण के लिए बनाई गई है।
4. **राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (NDMA) दिशा-निर्देश:** NDMA ने तटीय आपदाओं से निपटने के लिए समग्र रणनीति बनाई है, जिसमें पूर्व चेतावनी प्रणाली, हरित पट्टी निर्माण और समुदाय आधारित आपदा प्रबंधन पर बल दिया गया है।
5. **मिशन LiFE (Lifestyle for Environment):**
   यह नीति नागरिकों को पर्यावरण-अनुकूल जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित करती है, ताकि संसाधनों का उपयोग अधिक जिम्मेदारी से किया जा सके।

सतत विकास की दिशा में स्थानीय पहलें

भारत के तटीय राज्यों में कुछ उत्कृष्ट उदाहरण हैं जहाँ स्थानीय समुदायों ने नीतिगत सहयोग के साथ सतत विकास की दिशा में कार्य किया है —

- **केरल में "कुदुम्बश्री" आंदोलन:** इस पहल ने महिलाओं को कृषि, मत्स्य पालन और लघु उद्योगों में सक्रिय भागीदारी का अवसर दिया। इससे आर्थिक आत्मनिर्भरता और सामाजिक सशक्तिकरण दोनों को बल मिला।
- **ओडिशा में सामुदायिक इको-टूरिज्म:** पर्यावरण-अनुकूल पर्यटन के माध्यम से स्थानीय लोगों को रोजगार के अवसर मिले, साथ ही पर्यावरण संरक्षण भी सुनिश्चित हुआ।
- **गुजरात में सामुदायिक वन प्रबंधन:** यहाँ ग्रामीण समुदायों ने सामूहिक रूप से मैंग्रोव वनों का पुनर्वास किया, जिससे भूमि क्षरण और तटीय कटाव की समस्या में कमी आई।
- **अंडमान-निकोबार में सतत मत्स्य पालन:** पारंपरिक मत्स्य पद्धतियों और आधुनिक तकनीक के संतुलन से मछुआरा समुदायों ने आर्थिक स्थिरता प्राप्त की।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि जब नीतियों में स्थानीय भागीदारी और पारंपरिक ज्ञान को जोड़ा जाता है, तो विकास अधिक प्रभावी और स्थायी बनता है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

संतुलित भूमि उपयोग नीति की आवश्यकता

भूमि संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए एक समग्र भूमि उपयोग नीति आवश्यक है। ऐसी नीति जिसमें —

- भूमि उपयोग की स्पष्ट श्रेणियाँ (कृषि, उद्योग, पर्यटन, वानिकी आदि) निर्धारित हों।
- पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन अनिवार्य किया जाए।
- स्थानीय समुदायों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल किया जाए।
- भूमि अधिग्रहण के दौरान विस्थापित परिवारों के लिए पुनर्वास और आजीविका सुरक्षा सुनिश्चित की जाए।

संतुलित भूमि उपयोग नीति विकास की दिशा में एक स्थायी आधार प्रदान कर सकती है, जिससे संसाधनों का संरक्षण और सामाजिक-आर्थिक समानता दोनों संभव होंगे।

सतत विकास के प्रमुख उपाय

1. **पर्यावरण-अनुकूल तकनीकों का उपयोग:** औद्योगिक और कृषि क्षेत्रों में हरित प्रौद्योगिकी को बढ़ावा दिया जाए।
2. **सामुदायिक सहभागिता:** स्थानीय संस्थाओं, पंचायतों और SHG समूहों को भूमि संसाधन प्रबंधन में सशक्त बनाया जाए।
3. **शिक्षा और जन-जागरूकता:** पर्यावरण शिक्षा को तटीय क्षेत्रों में अनिवार्य रूप से लागू किया जाए।
4. **वैकल्पिक आजीविका के साधन:** जैविक खेती, हस्तकला और इको-टूरिज्म जैसे व्यवसायों को प्रोत्साहन दिया जाए।
5. **नीति समन्वय:** केंद्र और राज्य स्तर पर पर्यावरण एवं विकास नीतियों में एकरूपता लाई जाए।

V. सुझाव

तटीय क्षेत्रों के सतत और संतुलित विकास के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं —

1. **संतुलित भूमि उपयोग नीति तैयार की जाए।**
   प्रत्येक तटीय राज्य में भूमि उपयोग का वैज्ञानिक मानचित्र तैयार किया जाए, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि कौन-से क्षेत्र कृषि, मत्स्य पालन, पर्यटन और उद्योग के लिए उपयुक्त हैं।
2. **सामुदायिक भागीदारी को प्राथमिकता दी जाए।**
   भूमि संसाधन प्रबंधन में स्थानीय समुदायों, ग्राम सभाओं और स्व-सहायता समूहों को सक्रिय भूमिका दी जाए। सामूहिक निर्णय से संसाधनों का संरक्षण और उपयोग अधिक प्रभावी होगा।
3. **जैविक और पर्यावरण-अनुकूल कृषि को बढ़ावा दिया जाए।**
   रासायनिक खेती के स्थान पर जैविक खेती और जल-संरक्षण तकनीकों का उपयोग किया जाए, जिससे भूमि की उर्वरता बनी रहे और प्रदूषण घटे।
4. **मैंग्रोव और तटीय वनों का संरक्षण अनिवार्य बनाया जाए।**
   मैंग्रोव पुनर्वास और हरित पट्टी विकास के लिए स्थानीय लोगों को प्रशिक्षण और रोजगार के अवसर प्रदान किए जाएँ।
5. **रेत खनन और औद्योगिक प्रदूषण पर सख्त नियंत्रण लगाया जाए।**
   अवैध खनन और औद्योगिक अपशिष्ट प्रबंधन के लिए कठोर दंडात्मक नीतियाँ लागू की जाएँ।
6. **विस्थापित परिवारों के पुनर्वास और सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित की जाए।**
   भूमि अधिग्रहण से प्रभावित परिवारों को वैकल्पिक आजीविका, शिक्षा, और आवास की स्थायी व्यवस्था दी जाए।
7. **स्थानीय अर्थव्यवस्था को सशक्त करने के लिए वैकल्पिक रोजगार सृजन किया जाए।**
   इको-टूरिज्म, हस्तकला, मत्स्य प्रसंस्करण और लघु उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाए ताकि लोगों की निर्भरता बाहरी उद्योगों पर कम हो।
8. **शिक्षा और जन-जागरूकता पर बल दिया जाए।**
   तटीय समुदायों को पर्यावरणीय चेतना और सतत विकास की अवधारणा से जोड़ा जाए। युवाओं में कौशल विकास कार्यक्रम चलाए जाएँ।
9. **नीतिगत समन्वय और दीर्घकालिक योजना अपनाई जाए।**
   केंद्र और राज्य सरकारों के बीच नीतिगत एकरूपता सुनिश्चित की जाए ताकि भूमि उपयोग और संरक्षण प्रयासों में निरंतरता बनी रहे।
10. **स्थानीय ज्ञान और पारंपरिक पद्धतियों का संरक्षण किया जाए।**
    तटीय समुदायों के पारंपरिक संसाधन प्रबंधन ज्ञान को नीतियों में शामिल किया जाए, क्योंकि वही दीर्घकालिक पर्यावरणीय स्थिरता की कुंजी है।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

VI. निष्कर्ष

इस शोध अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों का दोहन केवल आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि एक गहरा सामाजिक, पर्यावरणीय और सांस्कृतिक परिवर्तन है। भूमि, जल, वन, खनिज और समुद्री संसाधनों के अनियंत्रित उपयोग ने तटीय समुदायों के पारंपरिक जीवन, आजीविका और सामाजिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया है।

सबसे पहले, यह पाया गया कि **भूमि उपयोग के स्वरूप में तीव्र परिवर्तन** हुआ है। पहले जो भूमि कृषि, मत्स्य पालन या सामुदायिक उपयोग में थी, वह अब औद्योगिक इकाइयों, बंदरगाहों, पर्यटन परियोजनाओं और शहरी विस्तार में परिवर्तित हो गई है। इससे ग्रामीणों की पारंपरिक आजीविका के साधन कम हुए हैं और बेरोजगारी की स्थिति बढ़ी है।

दूसरा, **सामाजिक असमानता और विस्थापन की समस्या** गंभीर रूप से उभरी है। जिन वर्गों के पास भूमि और पूंजी है, वे औद्योगिक विकास से लाभान्वित हुए हैं, जबकि भूमिहीन और गरीब समुदाय अपनी भूमि और पहचान दोनों खो बैठे हैं। भूमि अधिग्रहण और पर्यटन परियोजनाओं के कारण बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ, जिससे सामाजिक अस्थिरता और पलायन की प्रवृत्ति बढ़ी।

तीसरा, **पर्यावरणीय असंतुलन और पारिस्थितिकी तंत्र का ह्रास** एक प्रमुख चिंता का विषय है। वनों की कटाई, रेत खनन, जल प्रदूषण और समुद्री जल के अंत:प्रवेश के कारण भूमि की उर्वरता घटी है। मैंग्रोव वनों के नष्ट होने से तटीय कटाव और बाढ़ जैसी आपदाओं की आवृत्ति बढ़ी है।

चौथा, **महिलाओं और कमजोर वर्गों की स्थिति** अधिक प्रभावित हुई है। भूमि आधारित व्यवसायों के घटने से महिलाओं की आर्थिक भूमिका कम हुई है और सामाजिक निर्णय प्रक्रिया में उनकी भागीदारी घट गई है।

पाँचवाँ, यह भी देखा गया कि जहाँ-जहाँ **सामुदायिक भागीदारी और स्थानीय प्रबंधन** को बढ़ावा दिया गया, वहाँ स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर रही है। सामूहिक मत्स्य पालन, महिला स्व-सहायता समूहों और सहकारी कृषि जैसे प्रयासों ने आजीविका सुरक्षा और सामाजिक एकता को मजबूत किया है।

सारांशत:, यह कहा जा सकता है कि तटीय क्षेत्रों में भूमि आधारित संसाधनों के असंतुलित दोहन ने आर्थिक लाभ तो दिए हैं, लेकिन सामाजिक समानता, पर्यावरणीय स्थिरता और सांस्कृतिक निरंतरता को कमजोर किया है।

तटीय क्षेत्रों का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि भूमि आधारित संसाधनों का उपयोग कितनी दूरदर्शिता और जिम्मेदारी से किया जाता है। विकास की दिशा तब तक अधूरी है जब तक उसमें सामाजिक समानता, पर्यावरणीय संरक्षण और सामुदायिक सहभागिता का संतुलन न हो।

भूमि केवल उत्पादन का साधन नहीं, बल्कि जीवन, संस्कृति और पहचान का आधार है। इसलिए तटीय समुदायों के सतत विकास के लिए यह आवश्यक है कि संसाधनों का उपयोग "साझेदारी" और "संरक्षण" की भावना से किया जाए। यदि नीति, समुदाय और पर्यावरण एक साथ आगे बढ़ें — तो तटीय भारत एक सशक्त, समृद्ध और स्थायी समाज का उदाहरण बन सकता है।

संदर्भ सूची

1. कुमार, आर. (2018). *तटीय पर्यावरण और संसाधन प्रबंधन.* नई दिल्ली: रावत प्रकाशन।
2. मिश्रा, एस. के. (2019). *भारतीय तटीय समुदायों का सामाजिक-आर्थिक अध्ययन.* वाराणसी: ज्ञान भारती प्रकाशन।
3. सिंह, ए. पी. (2020). *भूमि संसाधनों का सतत उपयोग और ग्रामीण विकास.* लखनऊ: अवध प्रकाशन।
4. शर्मा, वी. (2017). *पर्यावरणीय असंतुलन और तटीय विकास.* जयपुर: राजस्थान विश्वविद्यालय प्रकाशन।
5. पाटिल, एन. आर. (2021). *Coastal Livelihood and Resource Utilization in India*. मुंबई: यूनिवर्सिटी ऑफ मुंबई।
6. जोशी, एस. (2018). *सतत विकास और तटीय पारिस्थितिकी.* दिल्ली: भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद।
7. गुप्ता, एम. (2016). *सामुदायिक संसाधन प्रबंधन के नीतिगत आयाम.* नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन।
8. पांडे, आर. के. (2022). *भूमि उपयोग परिवर्तन और पर्यावरणीय प्रभाव.* प्रयागराज: विश्व पुस्तकालय।
9. देसाई, ए. वी. (2019). *Coastal Zone Management and Sustainable Development*. चेन्नई: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. वर्मा, पी. (2020). *ग्रामीण पलायन और सामाजिक परिवर्तन: एक तटीय अध्ययन.* नई दिल्ली: डिस्कवरी पब्लिशिंग।
11. मिश्रा, एन. (2017). *भूमि आधारित संसाधन और सामाजिक असमानता.* भोपाल: राष्ट्रीय समाजशास्त्र अकादमी।
12. सेन, एस. (2018). *Environmental Challenges in Coastal Regions of India*. कोलकाता: ईस्टर्न बुक एजेंसी।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421|A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 10, Issue 6, November-December 2023 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2023.1006029

13. घोष, ए. (2019). *Socio-economic Impacts of Coastal Resource Exploitation*. नई दिल्ली: इंडियन जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स, 45(3), 233–250।
14. नायर, के. (2020). *केरल के तटीय क्षेत्रों में भूमि उपयोग और पर्यावरणीय संकट*. त्रिवेंद्रम: यूनिवर्सिटी ऑफ केरल।
15. दुबे, एल. (2016). *भूमि संसाधन प्रबंधन और ग्रामीण नीति*. भोपाल: मध्य प्रदेश समाज अध्ययन संस्थान।
16. ओझा, आर. (2021). *भारत में तटीय नीति और ब्लू इकॉनमी*. नई दिल्ली: नीति आयोग प्रकाशन।
17. सिंह, एस. एवं चौधरी, पी. (2018). *भारत के तटीय समुदायों की आजीविका और चुनौतियाँ*. कोलकाता: समाज विज्ञान समीक्षा, 12(4), 178–196।
18. डेविड, पी. (2020). *Climate Change and Coastal Land Use Patterns in South Asia*. लंदन: रूटलेज।
19. ठाकुर, जे. (2021). *तटीय पर्यावरणीय संकट और सामुदायिक पहलें*. भुवनेश्वर: उत्कल विश्वविद्यालय प्रकाशन।
20. त्रिपाठी, आर. (2019). *आर्थिक असमानता और तटीय विकास का विरोधाभास*. दिल्ली: राष्ट्रीय अर्थशास्त्र जर्नल, 9(2), 112–129।
21. शर्मा, ए. (2018). *मछुआरा समुदाय और तटीय संसाधनों का क्षरण*. मुंबई: मराठी समाज अध्ययन परिषद।
22. पटेल, डी. (2017). *Land Degradation and Coastal Ecology in Western India*. सूरत: साउथ गुजरात यूनिवर्सिटी प्रेस।
23. सिंह, आर. (2022). *पर्यावरण संरक्षण और सामुदायिक भागीदारी: एक नीति विश्लेषण*. नई दिल्ली: भारतीय पर्यावरण जर्नल, 14(1), 85–98।
24. चौहान, एम. (2020). *भूमि आधारित संसाधन और सतत विकास की चुनौतियाँ*. आगरा: यश पब्लिकेशन।
25. विश्व बैंक (2021). *India Coastal Management Report: Socio-Economic and Environmental Aspects*. वाशिंगटन डी.सी.: विश्व बैंक प्रकाशन।

IJARETY

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY (IJARETY)

www.ijarety.in editor.ijarety@gmail.com